साहित्यसुधा
साहित्यकारों की वेबपत्रिका
साहित्यकारों की रचना स्थली
वर्ष: 3, अंक 48, नवम्बर(प्रथम) , 2018

गुजरात की लोकसंस्कृति का उन्मेष: गरबा

डॉ.रजनीकान्त एस शाह

आजकल चिंता और बेचैनी हमारी जिंदगी का हिस्सा बन गया है।ज़िंदगी का प्रत्येक क्षण ,जिंदगी की प्रत्येक सांस इन दोनों की शिकार है।कारोबार या नौकरी की चिंता,परिवार की चिंता, स्वास्थ्य की चिंता,कर्ज की चिंता,मौसम के प्रभावों की चिंता,तत्कालीन सामाजिक,राजनीतिक तथा सांस्कृतिक और धार्मिक परिवेशजन्य चिंता-हर कदम पर चिंता और चिंता और कभी कभी तो कोई मनोदबाव न होने की चिंता! बस,चिंता ही चिंता।जीवन है तो अच्छे-बुरे प्रसंग भी आएंगे।कोई भी तीज-त्यौहार हो उसे मनाने के लिये आर्थिक तथा समयगत अच्छे या बुरे अवसर अपने साथ चिंता लेकर आते हैं। इन चिंताओं,मनोदबावों तथा व्यथाओं से त्यौहार ही तो मनुष्य को मुक्ति दिलाता है।

आमतौर पर गरबा तथा रास माताजी के उत्सव के रूप में नवरात्रि से जुड़ा हुआ है लेकिन मूलत: वह एक लोक कला ही है।श्रीमान रजनीभाई व्यासजी के मतानुसार''हकीकत में यह लोकजीवन का एक संगीत-नृत्य प्रधान सामुदायिक उन्मेष है।''उसमें मात्र भक्ति ही नहीं व्यक्ति के,परिवार के तथा समाज जीवन की सभी घटनाएँ,मानवीय और परिवारिक संबंधों तथा भाव व्यक्त हुए होते हैं।

गरबा में अपेक्षाएँ, आशाएं, उमंगें, अनुभव, आनंद, क्रंदन, विलास, विराग, कोमलता, कारुण्य इत्यादि सारे भाव अभिव्यक्ति पाते हैं। चौबारा, महल, झोंपड़ी और कमरों की भीतरी अनेक अनकही कथाएँ या घूँघट में बंद मुस्कान और आँसू या चोरी छिपे घोले गए कुमकुम तथा विष इन गरबों में भीतरी आवरण भेदकर खुलकर अभिव्यक्त हुए सुनाई देते हैं।सांसारिक पीड़ाएं बुलंद स्वरों में,थिरकते हुए कदम और झूमते हुए हाथों में तालियाँ और

अदाओं में,घाघरे के घूमते हुए छोर और गरबे के घेरे में अभिव्यक्त होती हैं।चौक या चौखट,झोंपड़ियों के बीच के अंगना या मुहल्ले-गलियों में बिना नवरात्रि के भी ढ़ोल बजते ही रास-गरबे का दौर जम जाता है लेकिन उसका प्रमुख अवसर तो नवरात्रि ही है।

अपेक्षा:

उदा: ''छैलाजी रे मारी हाटु पाटणथी पटोलां मोकलावजो।''

(प्रियतम ! मेरे लिए पाटण से पटोलां लाइएगा।)

चिंता:

''एके लाल दरवाजे तम्बू तोणीया रे लोल,वहु तमे ना जशो जोवा के बादशो बड़ो निरालो।''

(सास अपनी बहू को आगाह करते हुए कहती है कि बहू तुम लाल दरवाजा क्षेत्र(अहमदाबाद का एक क्षेत्र विशेष) में जाना नहीं क्योंकि वहां बादशाह ने अपना डेरा डाला हुआ है और यह बादशाह बड़ा विचित्र है।)

उमंग: ''माँ पावा ते गढ़थी उतर्या महाकाली रे ,वसाव्यु चाम्पानेर पावागढवालीए।''

(माता महाकाली ने पावागढ़ से नीचे उतरकर चाम्पानेर नगर बसाया है।)

''लिली लिम्बडी रे लीलो नागरवेलनो छोड़,
प्रभु परोणला रे,मारे घेर उतारा करता जाव।
उतारो शु करू रे मारी घेर सीता जुवे वाट।
सीता एकला रे जुवे रामलखमणनी वाट।
मारे सीता घेर एकला रे मारी घेर जुए वाट।''

(हराभरे नीम और नागरवेल की पौध लगी है,प्रभु मेरे घर पधारें।श्री राम कहते हैं मेरे घर सिताजी अकेली हैं और वह मेरी प्रतीक्षा कर रही हैं,सिताजी राम-लक्षमण की प्रतीक्षा कर रही हैं।)

उमंग:

''केशरियों रंग तने लाग्यो ला गरबा केशरियों रंग तने लाग्यो रे लोल

कोने कोने लाग्यो रे गरबा केशरियों रंग।''
(गरबा ! तुम्हें केशरिया रंग लगा गया है और किस किसको केशरिया रंग लगा है ,यह तो बता दे।)

यह गरबा तो समग्र गुजरात का लोकधन है पर उसका बल एवं यौवन सविशेष रूप से खिले हुए हैं।

गरबा भले ही गुजरात की हमारी संस्कृति की एक परंपरा हो पर वह आज के परिवेश में अनेक चिंताएँ लेकर आता है।उसमे भाग लेने के लिये महिनों पहले से गरबा की विविध अदाओं का पूर्वाभ्यास, कोरियोग्राफर की खोज,कपड़ा बाजार में जाकर विविध अवसरोचित फिरभी नए फेशनवाले वस्त्र की खरीदी करना,ज्वेलरी,मेक-अप,ब्यूटीशियन की खोज,नाश्ते का आयोजन और गरबा खेलने के लिये पास प्राप्त करने की कवायद और पता नही ढेर सारी चिंताएं इस त्यौहार का एक अकाट्य हिस्सा हैं।फिरभी यह गरबा मंडित नवरात्रि का त्यौहार हमें पुन: अपनी परंपरा से जोड़ता है अवश्य।

गरबा के प्रति लगाव का यह एक प्रभाव समग्र जनजीवन पर पड़ता है फिरभी गरबा तो हमारे परंपरागत जीवन और हमारी लोकसंस्कृति से गहरा जुड़ा हुआ है।'सार्थ गुजराती जोडणी कोश' के अनुसार गरबा का अर्थ होता है-(१)नवरात्रि में जौ आदि के उगाये हुए अंकुर,जरई बोये जाते हैं,उस अवसर पर छेदोंवाली मटकी मे घी का दिया रखा जाता है वह,(२)दिया अथवा मांडवी (मंडपी) के इर्दगिर्द घेरे में घूमते हुए ताली बजाते हुए गाना(३)गरबा गाना(४) घेरे में नृत्य करते हुए और गाते हुए वृत्ताकार घूमना।गरबा मूल शब्द 'गर्भदीप' घड़े से जुड़ा हुआ है।यह एक प्रकार का नृत्य प्रकार ही है जो हमारी परंपरा के अनुसार माताजी की भक्ति स्वरूप समूह में गाया जाता है और घेरे में घूमते हुए नृत्य किया जाता है।

गरबा गुजरात की परंपरागत लोकसंस्कृति की देन है। वह ग्राम्य जीवन की सुखद परंपरा है। वर्षाकाल लगभग बिदाई के अंतिम पड़ाव पर होता है। किसान खेतों निराई आदि से मुक्त हो जाते हैं,खेतों में फस्ल पकने के लिये उत्तरा(ओतरा)और चित्रा(चितरा) नक्षत्र में सूर्य के ताप में धूप खाती हुई खड़ी है। गरबा अर्थात फस्ल की लुनाई की प्रतीक्षा कर रहे कृषक का फस्ल पकने का आनंदोत्सव! हमारे देश का किसान तो भाग्यवादी है।वह अपना काम तो कर देता है फिरभी वह निश्चित नहीं होता कि इस बार फस्ल अच्छी आएगी।बरसात अच्छी हो या ना हो और फस्ल अच्छी बैठे या न बैठे,यह सब तो भाग्य के अधीन है। बरसात के अतिरिक्त और भी स्थितियाँ हैं जो किसान की हर्षित आँखों को आंसुओं में भी डूबा सकती हैं।नियतिवादी किसान हर स्थिति के लिये तैयार होता है।गाँव के लोगों ने गरबे की लोकसंस्कृति में पौराणिक रंग भी शामिल किया है।गाँव में कहां नगरो जैसा गरबा करने के लिये मैदान होता है? गाँव के मुहल्ले में ही जिसका आँगन लम्बा-चौड़ा हो वहाँ मंडपी(शामियाना) लगाई जाती है। उसमें तेल भरी दियली में बाती को प्रज्वलित किया जाता है और लोग स्त्री-पुरुष साथ मिलकर सामूहिक रूप से घेरे में घूमते हुए ताली बजाते हुए गरबा गाते हैं और साथ ही साथ नृत्य भी करते हैं।एक व्यक्ति गरबा गाता है और बाकी लोग उसी लय में गाते हैं।गरबा की यही परंपरा है। इसी परंपरा ने उसे लोकप्रिय बनाया है।गरबा अर्थात ग्रामजनों का वह आनंदोत्सव जिसमें माताजी के प्रति कृतार्थता का भाव भी व्यक्त किया जाता है तथा एक तरह से संतुष्ठि का अनुभव भी किया जाता है।नवरात्रि का यह पर्व वैसे तो दीपावली जैसा ही पर्वाधिराज है। लोग सारी पीड़ा विस्मृतकर खुशियाँ मनाते हैं।

नौ दिन तक चलनेवाले सुदीर्घ इस त्यौहार में अष्टमी के दिन माताजी की पुजा-अर्चना की जाती है,हवन किया जाता है और नारियल की आहूति दी जाती है। रास भी खेला जाता है,डांडियारास भी खेला जाता है,कहीं कहीं तो

रज्जुरास भी खेला जाता है। रातभर लोग नृत्य करते रहते हैं। नवमी का दिन भी उसी उल्लास का दिन रहता है।

दशहरे का दिवस बड़ी दियली में तेल के साथ बिनौले भरे जाते हैं।बाती के जलने के साथ तेल और बिनौले गरम होने लगते है।गरबे का समय खत्म हो तबतक तो वह दियली दहकने लग जाती है।माताजी का ओझा ज़ोर से चीखते हुए आवेश में आकर अपना माथा धुनने लगता है और उसका सारा शरीर कांपने लगता है। इसी अवस्था में वह दहकती हुई दियली को पकड़कर थाली में रखता है। उस दिये को लेकर सारे गाँववासी गाते हुए जलाशय पर जाते हैं और उसे जलाशय के जल में बड़े आदरपूर्वक विसर्जित कर देते है। इस प्रकार दिये तथा जरई को भावभीनी बिदाई दी जाती है।

गरबा एक से अनेक ज्योति प्रकट करनेवाली आद्यशक्ति महामाया की पूजा का प्राचीन स्वरूप है। आसोज महीने के शुक्ल पक्ष की प्रथमा से लेकर नवमी तक माता की आराधना की जाती है,पूजा की जाती है तथा अनशन किए जाते हैं।माता की महिमा का गायन करने के लिए स्त्री-पुरुष भाव विभोर होकर गरबा खेलते हैं। देवीपूजा ही गरबा की उत्पत्ति का उत्स है। हर व्यक्ति अपनी मनोकामना पूर्ण हो ऐसे आशीर्वाद मन ही मन मांगता है।

गरबा जैसा ही एक और प्रकार है,जो गरबी के नाम से विख्यात है।इसका संबंध श्रीकृष्ण की भक्ति से है। कृष्ण-गोपी के शृंगार का गरबा-गरबी में चित्रण हुआ है। कृष्ण गोकुल छोडकर मथुरा जाते हैं और वहाँ ही बस जाते हैं। अत: कृष्ण विरह से व्याकुल गोपियों की विरह-व्यथा का उसमें चित्रण पाया जाता है।

आज तो गरबे का स्वरूप ही बदल गया है।यद्यपि भक्तिभाव थोड़ा बहुत रहा है पर अब गरबे की परिभाषा ही बदल गई है। वह मात्र आनंद का ही त्यौहार बनकर रह गया है। एक वक्त था जब गरबा गानेवाले को माताजी का आराधक कहा जाता था पर अब उन्हें खेलैया कहा जाता है।डी.जे. के शोर में असली गरबा खो गया है। अब नगरीय संस्कृति,सिनेमा आदि से गरबा प्रेरणा लेने लगा है।अब मनोरंजन तथा पैसा कमा लेने के स्वार्थ ने भक्ति भाव को हाशिये में ढकेल दिया है। वक्त के प्रभाव ने गरबा को भी बक्षा नहीं है। गरबा शहर में आकर प्रदूषित हो गया है।मुहल्ले का गरबा अब रंगमंच पर आ गया है और शक्तिपूजा के अतिरिक्त अन्य गीत भी गाए जाने लगे हैं।ध्वनिवर्द्धक यंत्र,संगीत मंडली आदि के कारण गरबा अपना मूल व्यक्तित्व खो चुका है।गरबा में गीत,स्वर,लय और ताल महत्वपूर्ण है।गरबा में म्हाड,काफी,पिलु,धनाश्री,कालिंगड़ो और सारंग आदि रागों के विविध मिश्रण से गरबे की मिठाश टपकती है।गरबा में एक ताली,दो ताली,तीन ताली और ताली तथा चुटकी आदि प्रकार प्रचलित हैं।

गरबा में नरसिंह महेता,दयाराम,वल्लभ,न्हानालाल,सुंदरम,उमाशंकर जोशी,वेणीभाई,राजेंद्र शाह,निनु मजूमदार,राजेंद्र शाह तथा अविनाश व्यास आदि के गीतों का भरसक उपयोग हुआ है।

संदर्भ:(1) तारीख 12 ओक्टोबर 2016 के गुजरात समाचार में प्रकाशित खलील धनतेजवी

जी का लेख।

(2) गुजरातनी अस्मिता -लेखक श्री रजनी व्यास।

(3 फाल्गुनी पाठक जी,अतुलभाई पुरोहित तथा किंजल दवे के गरबों की सी.डी.

कृपया रचनाकार को मेल भेज कर अपने विचारों से अवगत करायें